हिन्दी, हिन्दू, हिन्दू राष्ट्र

शाकिर

भारतीय समाज की तमाम प्रगतिशील धारायें इस संघी गोलबंदी के रास्ते में बाधक रही हैं। एक लम्बे समय तक भारतीय समाज में संघ की हिन्दुत्व की विचारधारा के मुकाबले कम्युनिस्ट और समाजवादी विचारधारा ज्यादा फलती-फूलती रही है।

नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली; भाजपा की जीत के बाद राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ बहुत उत्साहित था। वह इतना ज्यादा उत्साहित है कि उसे लगता है कि भारत को हिन्दू राष्ट्र बनाने का सपना इस तरह से नहीं तो उस तरह से पूरा हो सकता है। वह इसमें भाषाई छल का इस्तेमाल करने से भी नहीं गुरेज कर रहा है।

पिछले समय में संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने एक शिगूफ़ा उछाला। उन्होंने कहा कि यदि जर्मनी में रहने वाले लोग अपने को अमेरिकी कह सकते हैं तो हिन्दूस्तान में रहनेवाले स्वयं को हिन्दू क्यों नहीं कह सकते? उनका आशय सपष्ट था: हिन्दूस्तान में रहने वाले हर व्यक्ति को, चाहे उसकी धार्मिक आस्थाएं कुछ भी हो, स्वयं को हिन्दू कहना चाहिए। हिन्दुओं ही नहीं, सिक्खों, बौद्धों, जैनियों, मुसलमानों, ईसाईयों, इत्यादि सभी को स्वयं को हिन्दू कहना चाहिए।

जब इस बयान पर बवाल मचा तथा भाजपा के नेताओं से इस मामले में स्पष्टीकरण मांगा गया तो उन्होंने भी मोहन भागवत के सुर में सुर मिलाए। हद तो तब हो गई जब कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुई नजमा हेपतुल्ला ने ये भी घोषित कर दिया कि अरब देशों में तो लोग सिन्धु नदी के पार वालों को हिन्दू ही कहते हैं। जब इस पर हंगामा हुआ तो उन्होंने स्पष्टीकरण दिया कि उन्होंने हिन्दी कहा था, हिन्दू नहीं।

भाषाई खेल के जरिये देश के अन्य धार्मिक मतावलम्बी लोगों को हिन्दू घोषित कर देना खासा रोचक है। और जब इसमें इतिहास का इस्तेमाल किया जाता है तो यह और भी रोचक हो उठता है।

यह सच है कि प्राचीन काल में यूनान और रोम के लोग सिन्धु नदी से पूरब की ओर भारतीय उपमहाद्वीप में रहने वालों को हिन्दू कहते थे। सिन्धु नदी को यूनान में इन्डस कहते थे और इससे हिन्दू शब्द निकलकर आया था। इसका लोगों के धार्मिक मतों से कोई लेना-देना नहीं था।

प्राचीन काल में भारत में आज के अर्थों में हिन्दू धर्म मौजूद नहीं था। तब देश में बौध और जैन तथा उनके अनुयाई मौजूद थे। एक बड़ी आबादी स्थानीय भारतीय आदिवासी कबीलों की थी जिनके अपने ही देवी-देवता और धार्मिक अनुष्ठान व रीति-रिवाज थे। जहां तक आर्य और आर्य वर्ण शंकर लोगों का सवाल था वे उस चीज़ का पालन करते थे, जिसे बहुत ढीले-ढाले ढंग से ब्राह्मण धर्म कहा जाता था। बौद्ध और जैन धर्म इसी आबादी में ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप पैदा हुआ था। यह ब्राह्मण धर्म वैदिक रीति-रिवाजों और अनुष्ठानों की परम्परा में यह वैदिक (ऋग्वेद कालीन) था। उत्तर वैदिक (अथर्ववेद कालीन) काल से बिल्कुल भिन्न रूप ग्रहण कर चुका था। जब विदेशियों ने सिन्धु घाटी के भारतीय उपमहाद्वीप वासियों को हिन्दू नाम से संबोधित किया तो उन्होंने इन धार्मिक विविधताओं पर ध्यान नहीं दिया।

स्पष्ट है कि प्राचीन काल में आज के अर्थों में हिन्दू धर्म जैसी कोई चीज़ नहीं थी और न ही यह नाम चलन में था। पर मध्य काल में न केवल हिन्दू धर्म अस्तित्व में आ गया बल्कि हिन्दू नाम ने भी अब बिल्कुल अलग अर्थ ग्रहण कर लिया।

अज जिसे हिन्दू धर्म कहते हैं वह मुख्यत: मध्य युग की पैदाइश है। तब तक भारत में वर्ण और जाति व्यवस्था पूरी तरह से विकसित हो गई थी। कबीलाई समाज को छोड़कर भारतीय समाज चार वर्णों (साथ में पांचवा अंत्यज भी) के तहत जातियों और उपजातियों में विभाजित हो चुका था। धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों की बात की जाये तो वैदिक काल के देवी-देवता (इन्द्र, वरुण, मारूत, अग्नि, सूर्य, उषा इत्यादि) पृष्ठभूमि में जा चुके थे तथा उनके साथ वैदिक यज्ञ और बलि भी। इनका स्थान ब्रह्मा, विष्णु, महेश की तिकड़ी तथा विष्णु के राम और कृष्ण नामक अवतारों ने ले लिया था। इन्द्र एक लंपट-व्यभिचारी में रुपान्तरित हो चुका था। यज्ञों और बलि का स्थान अब पूजा-पाठ ने लिया था। गौतम बुद्ध और महावीर जैन की मूर्तियों की तर्ज पर राम, कृष्ण और शंकर की मूर्तियां तथा उनके मंदिर पुमुख हो चुके थे। इसमें शंकराचार्य के चारों धाम के साथ तीर्थ स्थलों की यात्रा ने महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया। रीति-रिवाजों और अनुष्ठानों की एक लम्बी और सघन श्रृंखला सामने आई। इन सबकों पुराण कथाओं के जरिये वैधानिकता प्रदान की गई जिनकी रचना ईसा की प्राथमिक सदियों से लेकर पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी तक होती रही।

इस मध्य कालीन हिन्दू धर्म में भक्ति की अपनी भूमिका थी। दक्षिण के शैव और वैष्णव सम्प्रदायों में पैदा होकर भक्ति की यह परंपरा उत्तर भारत तक फैली। महाभारत कथा में लगभग चौथी सदी में जोड़ी गई गीता में इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा की हालांकि गीता को शोहरत उत्तर मध्य काल में ही मिलनी शुरू हुई।

मध्य कालीन हिन्दू धर्म जिस रूप में विकसित हुआ उसमें ही यह अंतर्निहित था कि वह यहूदी, ईसाई तथा इस्लाम जैसे पैगम्बर और आसमानी किताब वाले एकेश्वरवादी धर्मों से ही नहीं बल्कि स्वयं भारत के बौद्ध और जैन धर्मों से भी अलग था। बौद्ध और जैन धर्मों के निश्चित प्रवर्तक थे और उनकी शिक्षाओं के निश्चित संग्रह थे। हालांकि ये दोनों ही धर्म किसी ईश्वर की सत्ता को नहीं स्वीकार करते थे पर बाद में स्वयं गौतम बुद्ध और महावीर जैन को ही ईश्वर का दर्जा दे दिया गया। वस्तुत: भारत में पहली मूर्तियां बुद्ध और महावीर की ही बनीं। बाद में इनकी नकल पर राम-कृष्ण और शिव की मूर्तियां बननी शुरू हुई।

जिस तरह से ढेरों देवी-देवताओं वाले वैदिक तथा बाद में ब्राह्मण परम्परा से हिन्दू धर्म पैदा हुआ था। उसमें एक ईश्वर और एक आसमानी किताब की और साथ ही एक निश्चित अनुष्ठानों का समुच्चय व पूजा पद्धति की गुंजाइश कम थी। हालांकि प्राचीन प्रतिष्ठा के कारण वेदों को बहुत ऊंचा सम्मान हासिल था तथा उन्हें स्वयं ईश्वर कृत या यहां तक कि अनादि और अरचित माना जाता था तब भी उनका हिन्दुओं के किए वह महत्व नहीं था जो सभी धर्मों (यहूदी, ईसाई और इस्लाम) को दर्जा दिलाने का प्रयास भी सफल नहीं हो पाया हालांकि गीता के उपदेशों को स्वयं कृष्ण के मुंह से कहलवाया गया।

एक आसमानी किताब की तरह एक ईश्वर का मामला भी हिन्दू धर्म में स्पष्ट बना रहा। दार्शनिक स्तर पर भले ही एक सर्वशक्तिमान और संपूर्ण प्रकृति के रचयिता की कल्पना की गई हो पर मामला दूसरा बना रहा। एक सर्वशक्तिमान ईश्वर के बदले ब्रह्मा, विष्णु और शंकर की तिकड़ी को मान्यता मिली तथा राम और कृष्ण को विष्णु का अवतार घोषित किया गया। बाद में पुराण कथाओं में विष्णु के मत्सय अवतार भी घोषित कर दिये गये। हिन्दू धर्म में एक सर्वशक्तिमान ईश्वर के बारे में अस्पष्ट और बिखरे ख्यालों का आलम तो यह था कि रूढिवादी हिन्दू धर्म के आधार स्तंभों में से एक चारों धर्मों की स्थापना करने वाले शंकर या आदि शंकराचार्य ने जिस अद्वैत वेदान्त को प्रस्तावित किया तथा जो आज भी हर आम हिन्दू 'माया' इत्यादि अवधारणाओं में दोहराता रहता है, वह किसी भी प्रकृति के अस्तित्व से और इसीलिये उसके रचयिता के अस्तित्व से इंकार करता था। इन अर्थों में वह पूर्णतया नास्तिक दर्शन था और इसीलिए अन्य हिन्दू परम्परावादियों से शंकर को प्रच्छन्न बौद्ध घोषित कर दिया।

मध्य काल के धार्मिक सूत्र ग्रन्थों या स्मृतियों की चर्चा के और हिन्दू धर्म की चर्चा अधूरी रहेगी। याज्ञावल्क्य स्मृति से लेकर मनुस्मृति तक ऐसे कई सारे सूत्र ग्रन्थ हैं जो हिन्दू धर्म के मतावलंबियों के वैदिक जीवन तथा धार्मिक रीति-रिवाजों और अनुष्ठानों को निर्धारित करते हैं। इसमें सबसे मशहूर है मनुस्मृति जो अपने शूद्रवर्ण विरोधी और स्त्री विरोधी प्रावधानों के लिए मानी जाती है।

इस रूप में विकसित इस हिन्दू धर्म की अपनी कुछ विशिष्टताएं थी। एक ईश्वर और एक आसमानी किताब की अनुपस्थिति में इससे धार्मिक विश्वासों की वह एक रूपता नहीं थी जो सभी धर्मों की थी हालांकि इनमें भी मतों और सम्प्रदायों की विविधता की भरमार है। इस एकरूपता के अभाव में धार्मिक सहिष्णुता एक स्वाभाविक उपउत्पाद हो जाती है। लेकिन इसके साथ ही यह भी सच है कि अपनी सामाजिक संरचना में यह हिन्दू समाज बेहद रूढ़ और असहिष्णु था। इसकी वर्ण और जाति व्यवस्था का उल्लंघन नहीं किया जा सकता था। इसके लिये सामाजिक बहिष्कार से लेकर मृत्यु दण्ड तक के प्रावधान थे (एक शूद्र पुरूष द्वारा ब्राह्मण स्त्री से शारीरिक संबंध का शूद्र के लिए दण्ड मृत्युदंड था)।

इस हिन्दू धर्म में थोड़ा-बहुत परिवर्तन भारत में इस्लाम के आगमन के साथ हुआ, खासकर सूफी आंदोलन के प्रभाव में। लेकिन एक सिक्ख धर्म नामक एक नये धर्म की पैदाइश के आलावा यह कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं छोड़ पाया तथा अंग्रेजों के आने तक हिन्दू धर्म वही बना रहा और आधिकाधिक रूढ़ होता गया। इसमें वास्तविक परिवर्तन अंग्रेजों के आने के साथ भारत में पूंजीवाद के प्रवेश ने किया। आज जो हिन्दू धर्म मौजूद है वह पूंजीवाद द्वारा पूर्णतया परिवर्तित कर दिया गया हिन्दू धर्म है।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के हिन्दू साम्प्रदायिक इस परिवर्तित हिन्दू धर्म से ख़फ़ा हैं। वे मध्य युगीन हिन्दू धर्म की ओर वापसी चाहते हैं। इससे भी आगे बढ़कर वे एक ईश्वर और एक आसमानी किताब वाले हिन्दू धर्म को देखना चाहते हैं जो कि हिन्दू धर्म की परम्परा में कभी रहा ही नहीं। जिसे वे हिन्दुत्व कहते हैं। वह असल में यही है।

इस हिन्दुत्व के आधार पर हेडगेवार और गोलवलकर ने जिस हिन्दू राष्ट्र की कल्पना की थी वह वास्तव में केवल हिन्दुओं का और वह भी हिन्दुत्व में विश्वास करने वालों का होना था। उसमें सिखों, बौद्धों, जैनियों और खासकर मुसलमानों-ईसाईयों को तभी जगह मिलनी थी जब वे हिन्दुत्व को अपना लें। अन्यथा वे दोयम दर्जे का नागरिक बने रहने के लिए अभिशप्त थे। इसमें आदिवासियों को हिन्दू धर्म में दीक्षित किया जाना था तथा भांति-भांति के मतों को मानने वाले हिन्दुओं को भी एक धार्मिक आचार संहिता पर पंक्तिबद्ध किया जाना था। मनुस्मृति या उसका कोई संशोधित संस्करण ऐसी आचार संहिता हो सकती थी।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के दुर्भाग्य से वे अभी तक अपने मिशन में कामयाब नहीं हो पाये हैं। इसमें सबसे बड़ी बाधा अभी तक स्वयं हिन्दू धर्म मतावलंबी समाज रहा है जो इतना विविध है कि इसका कट्टर मत पर दृढ़तापूर्वक गोलबंद हो जाना मुश्किल साबित हुआ है। लेकिन इसके साथ ही भारतीय समाज की तमाम प्रगतिशील धारायें इस गोलबंदी के रास्ते में बाधक रही हैं। एक लम्बे समय तक भारतीय समाज में संघ की हिन्दुत्व की विचारधारा के मुकाबले कम्युनिस्ट और समाजवादी विचारधारा ज्यादा फलती-फूलती रहती है।

अब जबकि भांति-भांति के कौशल का इस्तेमाल कर संघी,भारत सरकार पर काबिज़ हो चुके हैं तो अपने हिन्दू राष्ट्र के एजेण्डे को आगे बढाने की इच्छा का प्रबल होना लाजिमी हैं। पर साथ ही यह भी सच है कि भारत की पूंजीवादी राजनीति की गति, भारत के पूंजीपति वर्ग की चाहत तथा स्वयं हिन्दू धर्म मतावलंबी समाज की स्थिति इनके इस एजेण्डे के लिए पूर्णतया अनुकूल नहीं है। इसलिए इनकी राह कठिन है।

इसी कारण वे हिन्दुस्तान और हिन्दू के भाषाई छल तक में भी उतरने के लिए मजबूर हैं अन्यथा इतना तो हर ऐरे-गैर नत्थू खैरे के लिए भी साफ है कि यदि अमेरिका में अमेरिकी व जर्मनी में जर्मन रहते हैं तो हिन्दोस्तान में रहने वाले हिन्दुस्तानी हैं न कि हिन्दू।

प्राचीन काल में भारत में आज के अर्थों में हिन्दू धर्म मौजूद नहीं था। तब देश में बौध और जैन तथा उनके अनुयाई मौजूद थे। एक बड़ी आबादी स्थानीय भारतीय आदिवासी कबीलों की थी जिनके अपने ही देवी-देवता और धार्मिक अनुष्ठान व रीति-रिवाज थे। जहां तक आर्य और आर्य वर्ण शंकर लोगों का सवाल था वे उस चीज़ का पालन करते थे, जिसे बहुत ढीले-ढाले ढंग से ब्राह्मण धर्म कहा जाता था। बौद्ध और जैन धर्म इसी आबादी में ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप पैदा हुआ था। यह ब्राह्मण धर्म वैदिक रीति-रिवाजों और अनुष्ठानों की परम्परा में यह वैदिक (ऋग्वेद कालीन) था। उत्तर वैदिक (अथर्ववेद कालीन) काल से बिल्कुल भिन्न रूप ग्रहण कर चुका था। जब विदेशियों ने सिन्धु घाटी के भारतीय उपमहाद्वीप वासियों को हिन्दू नाम से संबोधित किया तो उन्होंने इन धार्मिक विविधताओं पर ध्यान नहीं दिया।

कंगाली का लोकतंत्र

भारत में लगभग 40 करोड़ मज़दूर हैं, जो पूरी दुनिया की मज़दूर आबादी का लगभग 13 प्रतिशत है। भारत में असमानता बढ़ रही है और आर्थिक रूप से पिछड़े लोग बेहद ग़रीब होते जा रहे हैं। 70 प्रतिशत गैर-खेतीहर मज़दूर असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं। अगर इसमें खेतीहर मज़दूरों को भी शामिल कर दें (जो कुल मज़दूरों के 60 प्रतिशत हैं) तो यह आंकड़ा 90 प्रतिशत से भी अधिक हो जाता है। यहां हर प्रकार के अनौपचारिक रोजगार का चलन है, जिसमें कर्ज में डूबे तरह-तरह के बंधुवा मज़दूर और स्वरोज़गार में लगे लोग शामिल हैं। भारत में किये जानेवाले लगभग सारे काम अकुशल प्रकृति के हैं, जिनमें किसी खास शिक्षण-प्रशिक्षण की जरूरत नहीं होती और फ़िर भी ऐसे रोजग़ार कम ही हैं। भारत के नामचीन तकनीकी और सॉफ़्टवेयर उद्योग कुल मज़दूरों के बहुत मामूली हिस्से को भी रोजग़ार नहीं दे पाते। खुली बेरोजगारी 12 प्रतिशत है। 36 प्रतिशत आबादी उस गरीबी रेखा के नीचे रहती है, जिसका सरकारी पैमाना बहुत ही बेकार और ढीला-ढाला है। 1995 में, खेती में लगा एक परिवार जिसमें दो बड़े और दो बच्चे काम करते थे, उसकी सालाना आमदनी 50,000 रुपये थी, यानी हर महीने लगभग 4 हज़ार रुपये। भारत को दुनिया का सबसे बड़ा प्रजातंत्र कहा जाता है। बदकिस्मती से यह कंगाली और बदहाली का लोकतंत्र है।

-देश विदेश

तुर्की-ब-तुर्की

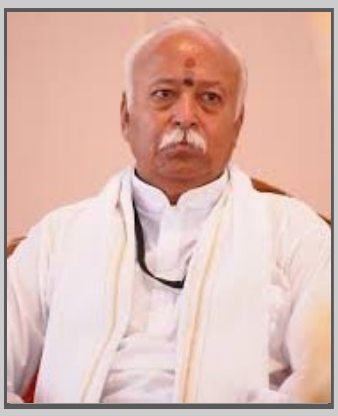

''मदर टेरेसा सेवा के बदले धर्मांतरण में जुटी थी' हमारा कहना है:-

हमारा कहना है:-

- .सूरज पर थूकने से थूक अपने ही मुंह पर गिरती है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर एस एस) की यह पुरानी फ़ितरत चली आई है भागवत जी। सरसंघ चालक बन कर आप इस फ़ितरत से अछूरे कैसे रह सकते हैं? मदर टेरेसा से पहले संघ गांधी पर भी अनाप-शनाप बकता रहा है अन्त में काला मुंह संघ का ही होता है।
- अच्छा होता अगर भागवत जी आप यह बता पाते कि मदर टेरेसा की सेवा के मुकाबले आपके संघ ने देश के दुखिया नागरिकों (या हिन्दुओं जिनका संघ दम भरता है) की क्या सेवा की है? बताते कैसे, क्योंकि आप लोगों का हीन्दुत्व सेवा करने का नहीं मेवा खाने का माध्यम बना हुआ है। आपका एकमात्र लक्ष्य हिन्दुओं की साम्प्रदायिक भावनायें भड़का कर सत्ता हथियाने के लिये वोट जुटाना रहा है। सत्ता भी आपको सेवा करने के लिये नहीं बल्कि व्यापारी वर्ग, जिनके आप प्रतिनिधि हैं, की मलाई को अक्षुण्ण रखने के लिये।
- यदि मदर टेरेसा के बारे में आपकी बेबुनियाद टिप्णी को मान भी लिया जाय तो भी सावल उठता है कि आप लोग घर-वापसी के नाम पर धर्मांतरण की कवायद ज़ोर-जबरदस्ती व प्रलोभन के तरीकों से करने पर मजबूर क्यों हैं? संघ की 'सेवा' में वह बात क्यों नहीं आ पा रही कि गरीब व दुखियारेअपने आप हिन्दू धर्म की ओर खिंचे चले आयें। संघ के सहयोगी संगठन विश्व हिन्दू परिषद ने तो प्रति 'घर-वापसी' 4 लाख रुपये का खर्च रखा हुआ है। यह सेवा का रास्ता है या मेवा का?
- संघ और उसके सहयोगी संगठनों ने जहां भी देश के सुदूर इलाकों में अपने तरीकों से हिन्दुत्व का मार्च आयोजित किया है, वहां नक्सलवादी हिंसा को पनपते देर नहीं लगी। जाहिर है शोषण पर आधारित व्यवस्था को थोपने का प्रतिरोध तो होगा ही। अगर आपके भगवान ने आपको बुद्धि दी है भागवत जी तो ज़रा सोचिये कि आपका व्यापारी वर्ग के चंदे से चलने वाला हिन्दुत्व का एजेंडा अंतत: किसका भला कर रहा है? कम से कम ग़रीब, बेरोज़गार, निरक्षर, बेघर हिन्दू का तो नहीं ही।